12073CH04

4

अपना मालवा

खाऊ-उजाड़ू सभ्यता में

पाठ परिचय

*प्रभाष जोशी का **अपना मालवा–खाऊ-उजाड़ू सभ्यता में** पाठ **जनसत्ता**, 1 अक्टूबर 2006 के **कागद कारे** स्तंभ से लिया गया है। इस पाठ में लेखक ने मालवा प्रदेश की मिट्टी, वर्षा, नदियों की स्थिति, उद्गम एवं विस्तार तथा वहाँ के जनजीवन एवं संस्कृति को चित्रित किया है। पहले के मालवा 'मालव धरती गहन गंभीर, डग-डग रोटी पग-पग नीर' की अब के मालवा 'नदी नाले सूख गए, पग-पग नीर वाला मालवा सूखा हो गया' से तुलना की है। जो मालवा अपनी सुख-समृद्धि एवं संपन्नता के लिए विख्यात था वही अब खाऊ-उजाड़ू सभ्यता में फँसकर उलझ गया है। यह खाऊ-उजाड़ू सभ्यता यूरोप और अमेरिका की देन है जिसके कारण विकास की औद्योगिक सभ्यता उजाड़ की अपसभ्यता बन गई है। इससे पूरी दुनिया प्रभावित हुई है, पर्यावरण बिगड़ा है।*

लेखक की पर्यावरण संबंधी चिंता सिर्फ़ मालवा तक सीमित न होकर सार्वभौमिक हो गई है। अमेरिका की खाऊ-उजाड़ू जीवन पद्धति ने दुनिया को इतना प्रभावित किया है कि हम अपनी जीवन पद्धति, संस्कृति, सभ्यता तथा अपनी धरती को उजाड़ने में लगे हुए हैं। इस बहाने लेखक ने खाऊ-उजाड़ू जीवन पद्धति के द्वारा पर्यावरणीय विनाश की पूरी तसवीर खींची है जिससे मालवा भी नहीं बच सका है। आधुनिक औद्योगिक विकास ने हमें अपनी जड़-ज़मीन से अलग कर दिया है। सही मायनों में हम उजड़ रहे हैं। इस पाठ के माध्यम से लेखक ने पर्यावरणीय सरोकारों को आम जनता से जोड़ दिया है तथा पर्यावरण के प्रति लोगों को सचेत किया है।

© NCERT not to be republished

प्रभाष जोशी

अपना मालवा
खाऊ-उजाड़ू सभ्यता में

उगते सूरज की निथरी कोमल धूप राजस्थान में रह गई। मालवा लगा तो आसमान बादलों से छाया हुआ था। काले भूरे बादल। थोड़ी देर में लगने लगा कि चौमासा अभी गया नहीं है। जहाँ–जहाँ भी पानी भरा हुआ रह सकता था लबालब भरा हुआ था, मटमैला बरसाती पानी। जितने भी छोटे–मोटे नदी–नाले दिख रहे थे, सब बह रहे थे। इससे ज़्यादा पानी अब यह धरती सोख के रख नहीं सकती थी। ऊपर से बादल कि कभी भी बरस सकते थे।

नवरात्रि की पहली सुबह थी। मालवा में घट-स्थापना की तैयारी। गोबर से घर-आँगन लीपने और मानाजी के ओटले को रंगोली से सजाने की सुबह। बहू-बेटियों के नहाने-धोने और सजकर त्योहार मनाने में लगने की घड़ी। लेकिन आसमान तो घऊँ-घऊँ कर रहा था। रास्ते में छोटे स्टेशनों पर महिलाओं की ही भीड़ थी। मैं, उजली-चटक धूप, लहलहाती ज्वार-बाजरे और सोयाबीन की फसलें, पीले फूलोंवाली फैलती बेलें और दमकते घर-आँगन देखने आया था। लेकिन लग रहा था कि पानी तो गिर के रहेगा। ऐसा नहीं कि नवरात्रि में पानी गिरते न देखा हो। क्वांर मालवा में मानसून के जाने का महीना होता है। कभी थोड़ा पहले भी चला जाता है। इस बार तो जाते हुए भी जमे रहने की धौंस दे रहा है।

नागदा स्टेशन पर मीणा जी बिना चीनी की चाय पिलाते हैं। सारे ज़रूरी समाचार भी देते हैं। गई रात क्वालालंपुर में भारत के हारने से दु:खी थे। पूछने पर ही मौसम और खेती पर आए, "हाँ, अबकी पानी भोत गिर्‌यो। किसान कै कि हमारी सोयाबीन की फसल तो गली गई। पण अब गेहूँ-चना अच्छा होयगा।" सार में उनने कहा और दुकान में लग गए। चाय और भजिया उनने अच्छा बनवा के दिया था। हम मियाँ-बीवी मज़े में खाते-पीते उज्जैन पहुँच गए। रास्ते में शिप्रा मिली। मैया ऐसी भरपूर और बहती हुई तो बरसों में दिखी थी। गए महीने टीवी पर लाइन पढ़ी थी कि उज्जैन में शिप्रा का पानी घरों में घुस गया। भोपाल, इंदौर, धार, देवास सब में झड़ी लगी थी। सब जगह फ़ोन लगा के पूछा था। खतरा कहीं न था, लेकिन सब को पुराने दिन याद आ गए थे।

अब मालवा में वैसा पानी नहीं गिरता जैसा गिरा करता था। इसलिए पहले का औसत पानी भी गिरे तो लोगों को लगता है कि ज़्यादा गिर गया। इस बार भी बरसात वही चालीस इंच गिरी है। कहीं ज़्यादा है कहीं थोड़ी कम। लेकिन लोग टीवी की समझ में अत्ति की बोलने लगे हैं। उज्जैन से देवास होते हुए इंदौर जाना मालवा के आँगन में से निकलना है। क्वांर की धूप होती तो भरी-पूरी गदराई हरियाली से तबीयत झक हो जाती, लेकिन कुएँ-बावड़ी और तालाब-तलैया के लबालब भरे, नदी-नालों को बहते और फसलों को लहराते देखो तो क्या गज़ब की विपुलता की आश्वस्ति मिलती है! खूब मनाओ दसेरा-दिवाली। अबकी मालवो खूब पाक्यो हे।

इंदौर उतरते ही गाड़ी में सामान रखते दव्वा को कहा कि अपने को सब नदियाँ, सारे तालाब, सारे ताल-तलैया और जलाशय देखने हैं। सब पहाड़ चढ़ने हैं।

उसने मुसकुराते हुए कहा—यहीं से?

नी यार पेले माता बिठायंगा।

माता तो बैठ गई, आरती भी हो गई ताऊजी, एक बजनेवाला है।

बाद में पाया कि उमर भी अब सत्तर की हो जाएगी। पहाड़ चढ़े नहीं जाएँगे। नदी-नाले पार नहीं होंगे। सूखती सुनहरी घास बुलाएगी लेकिन उस पर लेटकर रड़का नहीं जा सकेगा। मन से तो

किशोर हो सकते हो। शरीर फिर वैसा फुर्तीला, लचीला और गर्वीला नहीं हो सकता। उमर जो ले गई उसे ले जाने दो। उसका जो है, रखे। अपना जो है उसे जिएँ।

इस त्रासदायी प्रतीति के बावजूद दो जगहों से नर्मदा देखी। ओंकारेश्वर में उस पार से। सामने सीमेंट कंक्रीट का विशाल राक्षसी बाँध उस पर बनाया जा रहा है। शायद इसीलिए वह चिढ़ती और तिनतिन-फिनफिन करती बह रही थी। मटमैली, कहीं छिछली अपने तल के पत्थर दिखाती, कहीं गहरी अथाह। वे बड़ी-बड़ी नावें वहाँ नहीं थीं। शायद पूर में बहने से बचाकर कहीं रख दी गई थीं। किनारों पर टूटे पत्थर पड़े थे। ज्योतिर्लिंग का तीर्थ धाम वह नहीं लग रहा था। निर्माण में लगी बड़ी-बड़ी मशीनें और गुर्राते ट्रक थे। वहीं थोड़ी देर क्वांर की चिलचिलाती धूप मिली, लेकिन नर्मदा के बार-बार पूर आने के निशान चारों तरफ़ थे। बावजूद इतने बाँधों के नर्मदा में अब भी खूब पानी और गति है।

नेमावर के पास बजवाड़ा में नर्मदा शांत, गंभीर और भरी-पूरी थी। शाम हो जाने पर भी जैसे अपने अंदर के मंदे उजाले से गमक रही थी। चवथ का चाँद उस पर लटका हुआ था। मिट्टी की ऊँची कगार पर पेड़ों के बीच बैठे हुए हम चुपचाप उसे प्रणाम कर रहे थे। भेन जी ने जैसे उसे सहलाते हुए कहा—थक गई है। देखना अब रात को बहेगी।

रातभर हम उसके किनारे ही सोए। सबेरे उठकर फिर जैसे उसके नमन में उसके किनारे बैठे। अब वह शांत बह रही थी। अपन घाट नीचे नर्मदा किनारे के लोग। भेन जी गंगा किनारे की। हम नदी को नदी नहीं माँ मानते हैं। नर्मदा मैया है। उससे हम बने हैं। उसके किनारे बैठना माँ की गोद में डूबना है।

ओंकारेश्वर और नेमावर जाते हुए दोनों बार विंध्य के घाट उतरने पड़े। एक तरफ़ सिमरोल का घाट, दूसरी तरफ़ बिजवाड़। दोनों में सागौन के जंगल। पत्ते खाँखरे होते हुए, फिर भी फुनगियों पर फूल के झल्ले। सिमरोल के बीच से चोरल खूब बहती हुई मिली। बिजवाड़ में हर नाला बह रहा था। हर पहाड़ी नदी की रपट पर पानी था। बचपन में पितृपक्ष और नवरात्रि पर ऐसा ही पानी मिलता था। सारे नदी, नाले ऐसे ही कलमल करते जीवित हो उठते थे। पहाड़ों के सीने में कितने स्रोत हैं। सब बहें तो नीचे की काली मिट्टी खूब उमगकर फल-फूल और अन्न देती है। नेमावर के रास्ते पर ही केवड़ेश्वर है जहाँ से शिप्रा निकलती है। कालिदास की शिप्रा। बहुत बड़ी नदी नहीं है। लेकिन उज्जैन में महाकाल के पाँव पखारे तो पवित्र हो गई। चंबल विंध्य के जानापाव पर्वत से निकली और निमाड़, मालवा, बुंदेलखंड, ग्वालियर होती हुई इटावा के पास जमना में मिली।

चंबल को हमने घाटा बिलोद में देखा। काफ़ी पानी था। खूब बह रही थी। उसमें नहाते लड़के को गर्व था कि यहाँ छोटी दिखती हो तो क्या! हमारी चंबल से गंगा ही बस बड़ी है। आगे बहुत बड़ा बाँध है। खूब पानी है। इस बार गाँधी सागर के सब फाटक खोलने पड़े। इत्ता पानी भरा। गंभीर इतनी बड़ी नहीं है। लेकिन हालोद के आगे यशवंत सागर को इस बार फिर उसने इतना भर दिया

कि पच्चीसों साइफ़न चलाने पड़े। सड़सठ साल में तीसरी बार ऐसा हुआ। पार्वती और कालीसिंध ने फिर रास्ता रोका। दो दिन उनके पुल पर से पानी बहता रहा। इस बार मालवा के पठार की सब नदियों में पूर आई। उसके पास से बहनेवाली नर्मदा में भी खूब पानी आया। बरसों बाद हज़ारों साल की कहावत सच्ची हुई—मालव धरती गहन गंभीर, डग-डग रोटी, पग-पग नीर। दक्षिण से उत्तर की ओर ढलानवाले इस पठार की सभी नदियों के दर्शन हुए। खूब पानी, खूब बहाव और खूब कृपा। नदी का सदानीरा रहना जीवन के स्रोत का सदा जीवित रहना है।

नदियों के बाद नंबर था तालाबों का। हमारे आज के इंजीनियर समझते हैं कि वे पानी का प्रबंध जानते हैं और पहले ज़माने के लोग कुछ नहीं जानते थे क्योंकि ज्ञान तो पश्चिम के रिनेसां के बाद ही आया न! मालवा में विक्रमादित्य और भोज और मुंज रिनेसां के बहुत पहले हो गए। वे और मालवा के सब राजा जानते थे कि इस पठार पर पानी को रोक के रखना होगा। सबने तालाब बनवाए, बड़ी-बड़ी बावड़ियाँ बनवाईं ताकि बरसात का पानी रुका रहे और धरती के गर्भ के पानी को जीवंत रख सकें। हमारे आज के नियोजकों और इंजीनियरों ने तालाबों को गाद से भर जाने दिया और ज़मीन के पानी को पाताल से भी निकाल लिया। नदी-नाले सूख गए। पग-पग नीरवाला मालवा सूखा हो गया। लेकिन इस बार बिलावली भर गया है। पीपल्या पाला भर गया है। सिरपुर में लबालब पानी है और यशवंत सागर के सभी साइफ़न तो चले ही थे, फिर भी इंदौर की खान और सरस्वती नदियों में उतना पानी नहीं है जितने में कभी मैं नहाया हूँ और नाव पर सैर की है।

हाथीपाला का नाम इसलिए है कि कभी वहाँ की नदी को पार करने के लिए हाथी पर बैठना पड़ता था। चंद्रभागा पुल के नीचे उतना पानी रहा करता था जितना महाराष्ट्र की चंद्रभागा नदी में। इंदौर के बीच से निकलने और मिलनेवाली ये नदियाँ कभी उसे हरा-भरा और गुलज़ार रखती थीं। आज वे सड़े नालों में बदल दी गई हैं। शिप्रा, चंबल, गंभीर, पार्वती, कालीसिंध, चोरल सबके यही हाल हो रहे हैं। ये सदानीरा नदियाँ अब मालवा के गालों के आँसू भी नहीं बहा सकतीं। चौमासे में चलती हैं। बाकी के महीनों में बस्तियों के नालों का पानी ढोती हैं। नदियों ने सभ्यताओं को जन्म दिया। हमारी आज की सभ्यता इन नदियों को अपने गंदे पानी के नाले बना रही है। इस साल मालवा में सामान्य बारिश (35 इंच) से पाँच ही इंच ज़्यादा पानी गिरा है और इतने में ही नदी, नाले, तालाब, बावड़ियाँ और कुएँ चैतन्य हो गए हैं।

अपने पहले अखबार 'नयी दुनिया' की लाइब्रेरी में अब भी पानी के सन् 1878 से रेकार्ड मौजूद हैं। 128 साल की यह जानकारी ही आँख खोलने के लिए काफ़ी है कि इनमें एक ही साल था, 1899 का, जब मालवा में सिर्फ़ 15.75 इंच पानी गिरा था। लोक में यही छप्पन का काल है। लेकिन राजस्थान के ठेठ मारवाड़ से तब भी लोग यहीं आए थे और कहते हैं कि तब भी खाने और पीने को काफ़ी था। इन 128 सालों में एक ही साल अतिवृष्टि का था। सन् 1973 में 77 इंच पानी गिरा था। तब भी यशवंत सागर, बिलावली, सिरपुर और पीपल्या पाला टूटकर बहे नहीं थे।

28 इंच से कम बारिश हो तो वह सूखे का साल होता है। लेकिन ऐसे साल ज़्यादा नहीं हैं। छप्पन के काल ने देशभर में हाय-हाय मचाई हो लेकिन मालवा में लोग न प्यासे मरे न भूखे क्योंकि उसके पहले के साल खूब पानी था और बाद के साल में भी। अपने नदी, नाले, तालाब सँभाल के रखो तो दुष्काल का साल मज़े में निकल जाता है। लेकिन हम जिसे विकास की औद्योगिक सभ्यता कहते हैं वह उजाड़ की अपसभ्यता है।

'नयी दुनिया' की ही लाइब्रेरी में कमलेश सेन और अशोक जोशी ने धरती के वातावरण को गरम करनेवाली इस खाऊ-उजाड़ू सभ्यता की जो कतरनें निकाल रखी हैं वे बताने को काफ़ी हैं कि मालव धरती गहन गंभीर क्यों नहीं है और क्यों यहाँ डग-डग रोटी और पग-पग नीर नहीं है। क्यों हमारे समुद्रों का पानी गरम हो रहा है? क्यों हमारी धरती के ध्रुवों पर जमी बरफ़ पिघल रही है? क्यों हमारे मौसमों का चक्र बिगड़ रहा है? क्यों लद्दाख में बरफ़ के बजाय पानी गिरा और क्यों बाड़मेर में गाँव डूब गए? क्यों यूरोप और अमेरिका में इतनी गरमी पड़ रही है? क्योंकि वातावरण को गरम करनेवाली कार्बन डाइऑक्साइड गैसों ने मिलकर धरती के तापमान को तीन डिग्री सेल्सियस बढ़ा दिया है। ये गैसें सबसे ज़्यादा अमेरिका और फिर यूरोप के विकसित देशों से निकलती हैं। अमेरिका इन्हें रोकने को तैयार नहीं है। वह नहीं मानता कि धरती के वातावरण के गरम होने से सब गड़बड़ी हो रही है। अमेरिका की घोषणा है कि वह अपनी खाऊ-उजाड़ू जीवन पद्धति पर कोई समझौता नहीं करेगा। लेकिन हम अपने मालवा की गहन गंभीर और पग-पग नीर की डग-डग रोटी देनेवाली धरती को उजाड़ने में लगे हुए हैं। हम अपनी जीवन पद्धति को क्या समझते हैं!

प्रश्न-अभ्यास

1. मालवा में जब सब जगह बरसात की झड़ी लगी रहती है तब मालवा के जनजीवन पर इसका क्या असर पड़ता है?
2. अब मालवा में वैसा पानी नहीं गिरता जैसा गिरा करता था। उसके क्या कारण हैं?
3. हमारे आज के इंजीनियर ऐसा क्यों समझते हैं कि वे पानी का प्रबंध जानते हैं और पहले ज़माने के लोग कुछ नहीं जानते थे?
4. 'मालवा में विक्रमादित्य और भोज और मुंज रिनेसां के बहुत पहले हो गए।' पानी के रखरखाव के लिए उन्होंने क्या प्रबंध किए?
5. 'हमारी आज की सभ्यता इन नदियों को अपने गंदे पानी के नाले बना रही है।' क्यों और कैसे?
6. लेखक को क्यों लगता है कि 'हम जिसे विकास की औद्योगिक सभ्यता कहते हैं वह उजाड़ की अपसभ्यता है'? आप क्या मानते हैं?
7. धरती का वातावरण गरम क्यों हो रहा है? इसमें यूरोप और अमेरिका की क्या भूमिका है? टिप्पणी कीजिए।

योग्यता-विस्तार

1. क्या आपको भी पर्यावरण की चिंता है? अगर है तो किस प्रकार? अपने शब्दों में लिखिए।
2. विकास की औद्योगिक सभ्यता उजाड़ की अपसभ्यता है। खाऊ-उजाड़ू सभ्यता के संदर्भ में हो रहे पर्यावरण के विनाश पर प्रकाश डालिए।
3. पर्यावरण को विनाश से बचाने के लिए आप क्या कर सकते हैं? उसे कैसे बचाया जा सकता है? अपने विचार लिखिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

निथरी	–	फैली, चमकीली
चौमासा	–	बारिश के चार महीने
ओटले	–	मुख्यद्वार
घऊँ-घऊँ	–	बादलों के गरजने की आवाज़
पानी भोत गिरयो	–	पानी बहुत गिरा, बरसात बहुत हुई
फसल तो गली गई	–	फसल पानी में डूब गई और सड़-गल गई
पण	–	परंतु
उनने	–	उन्होंने
अत्ति	–	बढ़ा-चढ़ाकर, अतिशयोक्ति में
मालव धरती गहन गंभीर, डग-डग रोटी, पग-पग नीर	–	मालवा की धरती गहन गंभीर है जहाँ डगर-डगर पर रोटी और पग-पग पर पानी मिलता है। यानी मालवा की धरती खूब समृद्ध है
पश्चिम के रिनेसां	–	पश्चिम का पुनर्जागरण काल
विपुलता की आश्वस्ति	–	संपन्नता, समृद्धि का आश्वासन
अबकी मालवो खूब पाक्यो है	–	अबकी मालवा खूब समृद्ध है। यानी इतनी बरसात हुई है कि फसलें हरी-भरी हो गई हैं
पेले माता बिठायंगा	–	पहले माता की मूर्ति स्थापित करूँगा
रड़का	–	लुढ़का
मंदे उजाले से गमक रही थी	–	हलके प्रकाश में सुगंधित हो रही थी
चवथ का चाँद	–	चतुर्थी का चाँद
छप्पन का काल	–	1899 का भीषण अकाल
दुष्काल का साल	–	बुरा समय, अकाल
पूर	–	बाढ़
गाद	–	झाग, कूड़ा-कचरा
कलमल करना	–	सँकरे रास्ते से पानी बहने की आवाज़
सदानीरा	–	हर वक्त बहने वाली नदियाँ

© NCERT not to be republished

प्रेमचंद

(सन् 1880-1936)

प्रेमचंद का जन्म वाराणसी ज़िले के लमही ग्राम में हुआ था। उनका मूल नाम धनपतराय था। प्रेमचंद की प्रारंभिक शिक्षा वाराणसी में हुई। मैट्रिक के बाद वे अध्यापन करने लगे। स्वाध्याय के रूप में ही उन्होंने बी.ए. तक शिक्षा ग्रहण की। असहयोग आंदोलन के दौरान उन्होंने सरकारी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और पूरी तरह लेखन-कार्य के प्रति समर्पित हो गए।

प्रेमचंद ने अपने लेखन की शुरुआत पहले उर्दू में नवाबराय के नाम से की, बाद में हिंदी में लिखने लगे। उन्होंने अपने साहित्य में किसानों, दलितों, नारियों की वेदना और वर्ण-व्यवस्था की कुरीतियों का मार्मिक चित्रण किया है। वे साहित्य को स्वांत:सुखाय न मानकर सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम मानते थे। वे एक ऐसे साहित्यकार थे, जो समाज की वास्तविक स्थिति को पैनी दृष्टि से देखने की शक्ति रखते थे। उन्होंने समाज-सुधार और राष्ट्रीय-भावना से ओतप्रोत अनेक उपन्यासों एवं कहानियों की रचना की। कथा-संगठन, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन आदि की दृष्टि से उनकी रचनाएँ बेजोड़ हैं। उनकी भाषा सजीव, मुहावरेदार और बोलचाल के निकट है। हिंदी भाषा को लोकप्रिय बनाने में उनका विशेष योगदान है। संस्कृत के प्रचलित शब्दों के साथ-साथ उर्दू की रवानी इसकी विशेषता है, जिसने हिंदी कथा-भाषा को नया आयाम दिया।

*उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं—**मानसरोवर** (आठ भाग), **गुप्तधन** (दो भाग) (कहानी संग्रह); **निर्मला, सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कर्मभूमि, गबन, गोदान** (उपन्यास); **कर्बला, संग्राम, प्रेम की वेदी** (नाटक); **विविध प्रसंग** (तीन खंडों में, साहित्यिक और राजनीतिक निबंधों का संग्रह); **कुछ विचार** (साहित्यिक निबंध)। उन्होंने **माधुरी, हंस, मर्यादा, जागरण** आदि पत्रिकाओं का संपादन भी किया।*

लेखक परिचय

© NCERT not to be republished

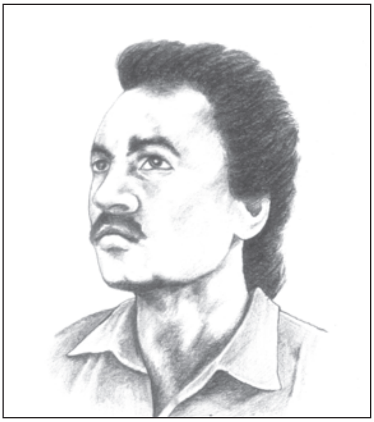

संजीव

(जन्म सन् 1947)

संजीव का जन्म ग्राम बांगरकलाँ, ज़िला सुल्तानपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। उन्होंने बी.एससी. तक शिक्षा प्राप्त की। समकालीन कहानी लेखन के क्षेत्र में संजीव एक प्रमुख नाम हैं। उनकी कहानियाँ अधिकतर 'हंस' में प्रकाशित हुई हैं।

*उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं–**तीस साल का सफ़रनामा, आप यहाँ हैं, भूमिका और अन्य कहानियाँ, दुनिया की सबसे हसीन औरत, प्रेत-मुक्ति** आदि। इन्होंने एक किशोर-उपन्यास **रानी की सराय** लिखा। उनके कुछ महत्त्वपूर्ण उपन्यास हैं–**किशनगढ़ का अहेरी, सर्कस, जंगल जहाँ शुरू होता है, सावधान! नीचे आग है, धार, सूत्रधार** आदि।*

संजीव की कहानियों और उपन्यासों में आंचलिक भाषा का प्रभाव दिखाई देता है। उनकी भाषा में एक ऐसी रवानगी है जो पाठक को बाँधकर रखती है। शब्दों का सटीक प्रयोग संजीव की भाषा की अपनी पहचान है। संजीव हंस पत्रिका के कार्यकारी संपादक भी रहे हैं।

© NCERT not to be republished

विश्वनाथ त्रिपाठी

(जन्म सन् 1931)

विश्वनाथ त्रिपाठी का जन्म बिस्कोहर गाँव, ज़िला बस्ती (सिद्धार्थ नगर), उत्तर प्रदेश में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव में हुई। तत्पश्चात् बलरामपुर कस्बे में आगे की शिक्षा प्राप्त की। उच्च शिक्षा के लिए वे पहले कानपुर और बाद में वाराणसी गए। उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। शुरू में उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय के राजधानी कालेज में अध्यापन कार्य किया और फिर दिल्ली विश्वविद्यालय के मुख्य परिसर में अध्यापन कार्य से जुड़े रहे। यहीं से सेवानिवृत्त होकर स्वतंत्र लेखन कर रहे हैं।

उनकी रचनाओं में **प्रारंभिक अवधी, हिंदी आलोचना, हिंदी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास, लोकवादी तुलसीदास, मीरा का काव्य, देश के इस दौर में, कुछ कहानियाँ–कुछ विचार** प्रमुख आलोचना और इतिहास संबंधी ग्रंथ हैं। **पेड़ का हाथ, जैसा कह सका** प्रमुख कविता-संग्रह हैं। उन्होंने आरंभ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के साथ **अद्दहमाण** (अब्दुल रहमान) के अपंभ्रश काव्य **संदेश रासक** का संपादन किया तथा **कविताएँ 1963, कविताएँ 1964, कविताएँ 1965** अजित कुमार के साथ व **हिंदी के प्रहरी रामविलास शर्मा** अरुण प्रकाश के साथ संपादित की। हाल ही में उनकी एक और पुस्तक **व्योमकेश दरवेश** प्रकाशित हुई है जो हिंदी के सुप्रसिद्ध आलोचक एवं साहित्यकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पर केंद्रित है।

उनको **गोकुलचंद्र शुक्ल आलोचना पुरस्कार, डॉ. रामविलास शर्मा सम्मान, सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार,** हिंदी अकादमी, दिल्ली के **साहित्यकार सम्मान** आदि से सम्मानित किया गया।

लेखक परिचय

© NCERT not to be republished

प्रभाष जोशी

(सन् 1937-2009)

लेखक परिचय

प्रभाष जोशी का जन्म इंदौर (मध्य प्रदेश) में हुआ। उन्होंने पत्रकारिता की शुरुआत ***नयी दुनिया*** *के संपादक राजेंद्र माथुर के सान्निध्य में की और उनसे पत्रकारिता के संस्कार लिए।* ***इंडियन एक्सप्रेस*** *के अहमदाबाद, चंडीगढ़ संस्करणों का संपादन,* ***प्रजापति*** *का संपादन और* ***सर्वोदय संदेश*** *में संपादन सहयोग किया। 1983 में उनके संपादन में* ***जनसत्ता*** *अखबार निकला जिसने हिंदी पत्रकारिता को नयी ऊँचाइयाँ दीं। गांधी, विनोबा और जयप्रकाश के आदर्शों में यकीन रखने वाले प्रभाष जी ने* ***जनसत्ता*** *को सामाजिक सरोकारों से जोड़ा। वे* ***जनसत्ता*** *में नियमित स्तंभ भी लिखा करते थे।* ***कागद कारे*** *नाम से उनके लेखों का संग्रह प्रकाशित है। सन् 2005 में* ***जनसत्ता*** *में लिखे लेखों, संपादकीयों का चयन* ***हिंदू होने का धर्म*** *शीर्षक से प्रकाशित हुआ है।*

प्रभाष जी में मालवा की मिट्टी के संस्कार गहरे तक बसे थे और वे इसी से ताकत पाते थे। देशज भाषा के शब्दों को मुख्यधारा में लाकर उन्होंने हिंदी पत्रकारिता को एक नया तेवर दिया और उसे अनुवाद की कृत्रिम भाषा की जगह बोलचाल की भाषा के करीब लाने का प्रयास किया। प्रभाष जी ने पत्रकारिता में खेल, सिनेमा, संगीत, साहित्य जैसे गैर पारंपरिक विषयों पर गंभीर लेखन की नींव डाली। क्रिकेट, टेनिस हो या कुमार गंधर्व का गायन, इन विषयों पर उनका लेखन मर्मस्पर्शी है।

© NCERT not to be republished

टिप्पणी

© NCERT
not to be republished

टिप्पणी

© NCERT
not to be republished